बलात्कार: 'दामिनी' गई 'दमक'

अब भेड़ियों से कोई डरता नहीं

■ मनोज झा

बलात्कार की इस घटना ने पूरे देश के जनमानस को हिला डाला। यद्धपि ऐसे जघन्य कांड पहले कई हो चुके हैं, पर यह जघन्यतम था। लगता है, पाप का घड़ा लबालब भर चुका है। देखना है, घड़ा फूटेगा तो क्या होगा? इस घटना ने लगभग दम तोड़ती हुई नज़र आ रही 'सोनिया-मनमोहन' सरकार के ताबूत में आख़िरी कील ठोक दी है। सरकार सहमी हुई नज़र आई। हर 'भयभीत' सरकार का अंतिम अस्त्र होता है बलप्रयोग। दिल्ली में सत्ता के सर्वोच्च केंद्र इंडिया गेट, राष्ट्रपति भवन और जहां नार्थ ब्लॉक-साउथ ब्लॉक स्थित हैं, विरोध-प्रदर्शन कर रहे युवाओं का पुलिस ने बर्बर दमन किया। दिल्ली की जमा देने वाली ठंड में प्रदर्शनकारियों पर जिस तरह पुलिस ने आंसू गैस छोड़े, पानी की बौछारें की, नवजवान छात्र-छात्राओं को बुरी तरह लाठियों से पीटा, उसे पूरी दुनिया ने 'लाइव' देखा। उस लड़की का अस्मत के साथ मानो भारत की अस्मत भी लुट गई।

पर लीडरों को जरा भी शर्म नहीं आई। ऐसी ख़बरें हैं कि बलात्कार-पीड़िता की मौत सफ़दरजंग अस्पताल में ही हो गई थी, पर सरकार ने यह दिखाने के लिए कि उसने पीड़िता को बचाने का कोई प्रयास नहीं छोड़ा, अपने 'दलाल' कॉरपोरेट डॉ. नरेश त्रेहन से मिलकर एक 'लाश' को सिंगापुर बड़े ही गुपचुप तरीके से भेजा और मीडिया एवं जनता को धोखा देने की कोशिश की।

लड़की की जो हालत थी उसे देखते हुए उसके जिंदा रहने की कोई गुंजाइश जान नहीं पड़ती थी। बहुत ही बर्बर तरीके से उसका बलात्कार हुआ था, पर उसमें जिजीविषा थी, वह जीना चाहती थी, ज़िंदगी में कोई मुकाम पाना चाहती थी, पर दिल्ली के जंगल में चंद भेड़ियों का शिकार बन गई। भेड़िया गुर्रा रहा है अभी भी। लेकिन खास बात यह है कि भेड़िये की गुर्राहट अब भयभीत नहीं करती। कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने लिखा है :

'भेड़िया गुर्राता है
तुम मशाल जलाओ
भेड़िया मशाल नहीं जला सकता।'

मशाल जलती रही है, जलती रहेगी, भेड़िये काबू में नहीं आ रहे। भेड़िये जंगलों में रहते हैं और कभी-कभी बस्तियों में भी घुस जाते हैं। इंसानों का समाज होता है। लाखों वर्षों की विकास-यात्रा के क्रम में समाज बना, हज़ारों वर्षों का इसका इतिहास है। सभ्यता के पायदानों पर आदमी ऊपर चढ़ता चला गया, फ़िर ऐसा क्यों हुआ कि समाज ही एक जंगल में तब्दील हो गया, भेड़िये लगातार आगे बढ़ते चले गए। पर इस जंगल में मंगल की एक ही बात है कि भेड़ियों से अब कोई डरता नहीं। मौत का भय मानो खत्म-सा हो गया है।

'दामिनी' गई 'दमक...' अब क्रांति का 'बादल राग' शुरू होना चाहिए।

बहुत से 'क्रांतिकारियों' ने 'दामिनी' के बलात्कार के प्रतिरोध में सड़कों पर उतरे युवाओं को मध्यवर्गीय और फैशन परस्त करार देते हुए इसे मिडल क्लास का, 'खाये-पिए-अघाए' वर्ग का तमाशा घोषित कर दिया। वहीं, कुछ स्वनामधन्य लीडरों ने यहां तक कह डाला कि रेप के खिलाफ़ सड़कों पर उतरा यह युवा वर्ग रात में पब और डिस्को में जाता है, पार्टियां करता है और सुबह प्रदर्शन में शामिल हो जाता है। अगर युवा ऐसा करते भी हैं तो क्या यह गुनाह है? और गुनाह है तो सरकार को पब, डिस्कोथेक, मॉल वगैरह बंद करा देना चाहिए।

लंदन से प्रकाशित 'डेली मिरर' में 6 जनवरी को 'दामिनी' के पिता का इंटरव्यू छपा। इस इंटरव्यू में 'दामिनी' के पिता ने उसकी और अपनी पहचान सार्वजनिक करते हुए पीडिता का नाम ज्योति सिंह पांडेय बताया। कई फोटोग्राफ़्स प्रकाशित हुए। उत्तर प्रदेश के बलिया जिले का वह गांव, 'दामिनी' का गांव बहुत पिछड़ा हुआ है। 'दामिनी' के घर की तस्वीरें, पुआल पर बैठे हैं लोग, टूटा-फूटा, अधबना, कच्चा-पक्का घर जहां बिजली भी नहीं और 'दामिनी' के पिता ने बताया कि जब वह दिल्ली आए थे, चार-पांच सौ रुपये की नौकरी मिली थी। पुश्तैनी ज़मीन बेच कर, यहां-वहां से पैसे का इंतजाम कर 'दामिनी' को पढ़ाया और वह इस लायक बनी कि अब कुछ कर सकती थी, ज़्यादा नहीं, अपने परिवार का सहारा तो बन ही सकती थी, अपने छोटे भाइयों की थोड़ी मदद कर सकती थी। वह उम्मीद थी, पर इस दुनिया में नहीं रहने के बावजूद अभी भी वह उम्मीद है। उम्मीद की लौ बुझती नहीं। 'दामिनी' दमकती रहेगी और 'मेघ बजेंगे।' जनकवि नागार्जुन ने लिखा है- 'दामिनी गई दमक मेघ बजे' और महाकवि निराला ने 'बादल राग' का सृजन किया था। बादल जो क्रांति के दूत बनकर आते हैं।

अब इस नृशंस एवं हौलनाक घटना से जुड़े कुछ अन्य बिंदुओं पर विचार करें।

समाज में स्त्री के सम्मान की बात उठ रही है। कुछ मीडिया घराने स्त्री के सम्मान का संकल्प दिलाने के अभियान में लग गए हैं।

इससे स्पष्ट है कि स्त्री असम्मानित है। क्या अभियान चलाकर किसी को सम्मान दिलाया जा सकता है? भारतीय संस्कृति में तो स्त्री को पूजनीय माना गया है, पर वह यही संस्कृति है जिसमें स्त्रियों का दर्जा शूद्रों के समान था। वेद पढ़ने की इजाजत दोनों को नहीं थी। मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने 'तप' करने का दुस्साहस करने वाले शंबूक की हत्या की थी, साथ ही 'अग्नि-परीक्षा' में खरी उतरने के बावजूद अपनी धर्म पत्नी सीता को दर-दर की ठोकरे 'खाने' को निकाल बाहर किया था, जब वो गर्भवती थीं। यह हमारी संस्कृति है स्त्रियों का 'सम्मान' करने वाली गौरवशाली 'हिंदू', 'भारतीय' संस्कृति। और इस्लाम में फतवे जारी किए जाते हैं। तीन बार तलाक कहो, छः शादियां करो। औरत-पांव की जूती। और औरत भी पति यानी स्वामी को संबोधित करती है-'आपके चरणों की दासी' तो इस 'महान संस्कृति' में औरतों का सम्मान क्योंकर होगा? स्त्री असम्मानित है, यह एक तथ्य है। औरत की कोई औकात नहीं, यह भी एक जलता हुआ सच है। क़ानून, शासन स्त्रियों को जिस्म के भूखे भेड़ियों से बचा पाने में अक्षम है। नपुंसक है सरकार। बहुतेरे लीडर भी बलात्कारी क़िस्म के हैं। रेप करने में हम इतने माहिर हैं कि निगाहों से भी ऐसा कर लेते हैं। और मीडिया में अगर रेप की ख़बरें न हों, फ़िल्मों में रेप के सीन न हों तो लोगों को मज़ा नहीं आता। रेप बिकाऊ है, रेप मज़दार है, रेप एक गेम है, तो रेप होंगे। ग़रीबी बढ़ती चली जा रही है, अपराध बढ़ते चले जा रहे हैं, अराजकता बढ़ती चली जा रही है, क़ानून महज़ दिखावा है, शासन अंधा-बहरा है और उसके हाथों में बंदूक है। कानून की क़िताब में सज़ा-ए-मौत-फांसी है, पर किसके लिए? जन कवि गोरख पांडेय की एक कविता है- 'उसको फांसी दे दो'। हक़ के लिये लड़ने वाले किसान जिन्हें न्याय चाहिए, सजा-ए-मौत मिलती है।

अब लीडरों के अजीबो-गरीब बयान, चौंका देने वाले, हंसने पर मज़बूर करने वाले, उनका मानसिक खोखलापन और दिमागी दिवालियापन जाहिर करने वाले बयान। न जाने कितने हैं। कुछ लीडरों को, धर्मगुरुओं को लगता है कि बलात्कार का मामला पोशाक से जुड़ा है। जींस, स्कर्ट वगैरह पश्चिमी पोशाक पुरुषों की कामवासना को भड़काते हैं।

कामवासना पर किसी का नियंत्रण नहीं फिर आदमी जो कर बैठता है उसे बलात्कार कहते हैं। पर इन लीडरों को, धर्मगुरुओं को क्या यह मालूम नहीं कि पर्दा नशीं औरतों के साथ भी बलात्कार होते हैं। फटे-चीथड़े-चीकट कपड़े पहनी ग्रामीण स्त्रियों के साथ जितने बलात्कार होते हैं, शहरी लड़कियों के साथ क्या होते होंगे। पर कुछ लीडर और धर्मगुरू औरतों के लिए ड्रेस कोड तय करना चाहते हैं। 21 वीं सदी के तेजी से बदलते भारत में ऐसा कर पाना असंभव सा है। अफगानिस्तान में तालिबान भी नहीं कर सकता। इन लीडरों और धर्मगुरुओं को अपनी मानसिकता का ड्रेसकोड तय करने की जरूरत है।

हिंदुस्तान को 'हिंदूस्थान' बनाने का सपना देखने वाले राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने कहा कि बलात्कार इंडिया में होते हैं, भारत में नहीं। यानी शहरों-महानगरों में होते हैं, गांवों-देहातों में नहीं। लगता है, संघ प्रमुख भागवत ने सिर पे काली टोपी पहनने के साथ ही साथ आंखों पर भी काली पट्टी बांध ली है। भारतीय गांवों की सच्चाई से अनजान हैं संघ प्रमुख। फिर उस हिंदुस्तान को 'हिंदूस्थान' कैसे बनायेंगे, जो अभी भी गांवों में ही बसता है।

भारतीय गांवों में रेप का इतिहास है, संस्कृति है। गांवों में सामंती पितृसत्ता बलात्कार को अपना परमाधिकार मानती है। उस सत्ता पर कोई अंकुश नहीं है। गांवों से इक्का-दुक्का छोड़ बलात्कार की खबरें मीडिया में नहीं आतीं। घुटी-दबी चीखें खेतों-खलिहानों में दफ़्न हो जाती हैं।

बहरहाल, लीडरों का मतलब वोट से है। रेप को भुना कर ही वोट मिल जाए तो बेहतर। एक ख़बर आई थी तस्वीरों के साथ। कुछ हिजड़े बलात्कार के विरोध में प्रदर्शन करने सड़कों पे निकले थे और तालियां बजा-बजा कर कह रहे थे, 'अरे, हम तो नकली हैं, असली दिल्ली में बैठे हैं।' सोनिया चुप हैं। राहुल चुप हैं। मनमोहन रिमोट से चलने वाले रोबोट हैं। भाजपा भी रेप को वोटों में भुनाना चाहती है।

और वामपंथी कहीं नज़र नहीं आए। उग्र वामपंथी भी नहीं! रेप के विरोध में मिडल क्लास के युवा सड़कों पर उतरे थे। ओह, कैसा समय है! वामपंथियों का 'मक्का मदीना' नहीं रहा। होता तो 'गाइडलाइन' मिलती। अब रेप के खिलाफ़ लाल झंडे लेकर मज़दूर-किसान कैसे सड़कों पर उतरें?

अदम गोंडवी साहब ने कहा है- 'जिस्म बेचती है कृष्णा आज रोटी के लिए'। उसके साथ भी रेप हुआ था। 'हरखुआ' की 'छोकरी' थी। 'चमारों की गली' में रहने वाली।

बस 'दुख ही जीवन की कथा' है।

राजनीति का 'अंधायुग'

यह साल भारतीय राजनीति के लिए तरह-तरह के दुर्निवार संकटों से भरा होगा। न जाने क्या होगा! सरकार की तमाम 'सुधारवादी' नीतियों के बावजूद, अर्थव्यवस्था को पूरी तरह सामग्री स्वामियों के हित में खुला छोड़ देने, यानी उन्हें देश को छुट्टा सांड की तरह चरने की छूट दे देने के बावजूद हालात गंभीर होते जा रहे हैं। मनमोहन और मोंटेक सिंह अहलूवालिया की सारी योजनाएं फेल होती दिखाई पड़ रही है। सरकार का राजकोषीय घाटा लगातार बढ़ता जा रहा है। विकास दर लगातार घटती जा रही है। लक्ष्य क्या पूरे होते, नई योजना में विकास दर की सीमा को ही घटा दिया गया। हैट्रिक जीत दर्ज करने के बाद मोदी जब दिल्ली पहुंचे तो उन्होंने केन्द्र सरकार को खुब आड़े हाथों लिया। खूब तालियां बटोरी। मोदी के लिए 'दिल्ली-दिल्ली' की आवाज़ें खूब बुलंद हुई। भाजपा ने प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार लगभग तय कर लिया है। मोदी का दावा मजबूत है। भाजपा के अंदर सत्तालोलुप नेताओं का समूह मोदी के इर्द-गिर्द लामबंद होने लगा है। जयललिता जो केन्द्र सरकार से सख़्त नाराज हैं, मोदी के साथ हैं। टीडीपी के लिये भी मोदी का साथ देना मजबूरी होगी। नीतिश कुमार क्या स्टैंड लेते हैं, यह अभी स्पष्ट नहीं है। इस प्रकार, ममता बनर्जी, का रूझान भी अभी तक साफ नहीं हो पाया है। ममता का मुलायम के साथ एक रिश्ता बनता नज़र आया था, पर राष्ट्रपति पद की उम्मीदवारी को लेकर मुलायम के पलटी मार जाने के कारण यह रिश्ता बनने से पहले ही टूट गया। मुलायम और मायावती अलग-अलग ध्रुव हैं। वामपंथी खामोश हैं। कांग्रेस नेतृत्व और भाजपा नेतृत्व से अलग तीसरा मोर्चा की संभावनाएं अभी स्पष्ट नहीं हो पा रही हैं। लेकिन इस दिशा में कुछ न कुछ जरूर होगा। वैसे, इसका बन पाना ही बड़ा कठिन जान पड़ता है, कामयाबी के बारे में तो सोचा भी नहीं जा सकता। जहां तक कांग्रेस का सवाल है, यह बुरी तरह से खोखली हो चुकी पार्टी बनकर रह गई है। लीडरशिप नहीं है। बौने किस्म के लोग भरे पड़े हैं। ऐसा कोई लीडर नहीं जिसे राष्ट्रीय पहचान हासिल हो। 'युवराज' फिसड्डी साबित हुए। अमेरिकी और ब्रिटिश अख़बारों में सोनिया-राहुल-मनमोहन की खूब भद्द पिटी है। सरकार की कोई साख़ रह नहीं गई है। इतना तय है कि इस साल के अंत-अंत तक संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन टूट-बिखर जाएगा। मराठा क्षत्रप शरद पवार अभी से आंखे दिखा रहे हैं। लूट-लूट कर घर भर लिया। जहां मौका मिला, वहीं लूटा, सबों ने लूटा। सोनिया-मनमोहन सरकार ने घोटालों में रिकॉर्ड बनाया। जितने घोटाले इस सरकार के कार्यकाल में सामने आये, स्वतंत्र भारत के इतिहास में कभी नहीं। बावजूद इसके सरकार चल रही है। और यही विडंबना है। आधुनिक भारतीय जनतंत्र की विडंबना। सरकार कहती है कि अरबपतियों की संख्या में इजाफ़ा हुआ है, पर यह नहीं कहती कितने करोड़ लोग सड़कों पे आ गए। राजधानी दिल्ली में ही लाखों लोग इस हाड़ कंपा देने वाली ठंड में खुले आसमान के नीचे रातें गुजारने को मजबूर हैं। विचित्र तो यह है कि सड़क पर खड़े होने और फुटपाथ पर सोने के लिए भी 'टैक्स' देना पड़ता है, 'खाकी' वसूलती है, इस रकम से कई घरों में एयर कंडीसनर चलते होंगे। पार्टियों के लिये आदमी महज एक वोट है। बेरोज़गारी बढ़ती जा रही है। खेती-किसानी उजड़ती जा रही है। गांव उजाड़ हो रहे हैं। महानगरों में पलायन बहुत बड़ी समस्या है। देहाती लोग महानगरों के अरण्य में शिकार बनते जा रहे हैं। पिछले 10 वर्षों में 10 लाख किसान आत्महत्या कर चुके हैं। उद्योगों में ऑटो मेशन जोरों पर हो रहा है। मज़दूर नौकरी से निकाले जा रहे हैं। ठेका प्रथा के तहत गुलामों की तरह काम करने को मजबूर हैं, पर गुलामी करने का मौका भी आसानी से नहीं मिलता। डिग्रियां ले चुका 'पढ़ा-लिखा' निम्नमध्यवर्गीय युवा रोज़गार नहीं मिलने से गहरी हताशा में है। आत्मघात की राह पर है। समाज में आवारा तत्व बढ़ते चले जा रहे हैं। अराजकता हावी हो रही है। राजनीति में हर स्तर पर गुंडावाद का बोलबाला है। और इस सबके बीच, आम आदमी भीतर से उबल रहा है। परिस्थितियां विस्फोटक होती चली जा रही हैं। लेकिन कोई राह भी नज़र नहीं आ रही है। भाजपा का गठबंधन विकल्प नहीं है। न ही तीसरा मोर्चा। लगता है, जनता के लिए सरकार चुन पाना कठिन होगा। राजनीतिक परिस्थितियों से जो संकेत मिल रहे हैं, उन्हें देखते हुए कहा जा सकता है कि कोई भी गठबंधन चुनाव में सरकार बना पाने लायक स्पष्ट बहुमत नहीं जुटा पायेगा। तब इस 'लोकतंत्र' के लिए एक गहरा संकट खड़ा हो जाएगा। इस संकट का समाधान क्या होगा, कहना मुश्किल है। वामपंथी पहले ही पूंजीवादियों से जरा भी कम पूंजीवादी नहीं रहे। माओवादी अंधी खाइयों में भटक रहे हैं। मीडिया में ऐसी खबरें गाह-ब-गाह आती हैं कि वहां भी ज़लवागाह बना लिए गए हैं। पता नहीं, सच क्या है। पर नेपाल में माओवादी राजनीति का जो हश्र सामने आया, उससे बहुत कुछ ज़ाहिर हो जाता है। रैडिकल लेफ्ट पॉलिटिक्स में जो अंतर्धारायें हैं, उनका स्वरूप अभी पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। स्टालिनवाद के प्रेत ने रैडिकल लेफ़्ट को अपना ग्रास बना लिया है। रैडिकल लेफ़्ट युवा नेतृत्व सर्व सत्तावादी विचारधारा के प्रभाव से निकल नहीं पा रहा। बंद गलियां हैं। अंधे मोड़ हैं। ऐसे में, अगर सत्ता के लिए पॉलिटिकल पार्टियां और उनके लीडरान आम जनता को चील-गिद्धों की तरह नोचने-खसोटने लगें, 'महा-महोत्सव' मानने लगें, इसकी संभावना ज्यादा दिखाई पड़ती है। तय है, सत्ता की बंदरबांट मुश्किल होगी। सत्ता के लिए 'श्वान-युद्ध' हो सकता है- कमीन कुत्ता-लड़ाई। हड्डी के चंद चूसे हुए टुकड़ों के लिए कुत्ते आपस में ही एक-दूसरे को नोचे खरोंचेगें। लेकिन नंगी राजनीति अब किस हद तक नंगी होगी, यह समझ से पड़े है। यह अंधायुग है।

– **मनोज**